

मुरलीधर दयानदेव केसेकर

बनाम

विश्वनाथ पांडु बर्डे व अन्य

फरवरी 22, 1995

(के.रामास्वामी और बी.एल.हंसारिया जे.जे.)

बॉम्बे भू-राजस्व संहिता: अनुसूचित जनजाति-धारित भूमि-विक्रय के लिये समझौता। संक्रमण के लिये अनुमति। सक्षम प्राधिकारी की शक्ति और कर्तव्य-इस आधार पर अनुमति देने से इन्कार कि सौंपी गई भूमि को बेचाने की अनुमति नहीं दी जा सकती और न ही इसे गैर-कृषि में परिवर्तित किया जा सकता है। उपयोग को वैध और संविधान के भाग 4 की योजना के अनुरूप माना गया।

अनुबंध अधिनियम, 1872- धारा 23, जनजातीय द्वारा धारित भूमि-विक्रय के लिये समझौता- अमान्य है और सार्वजनिक नीति के विपरीत है। संपत्ति हस्तान्तरण अधिनियम, 1882- धारा 53 ए।

जनजातीय द्वारा धारित भूमि गैर-जनजातियों के साथ जनजातियों द्वारा धारित भूमि विक्रय के लिये समझौता व कब्जा दिया गया। प्राधिकरण द्वारा कब्जा को गैर कानूनी ठहराया गया। धारा 53-ए लागू नहीं किया

गया। भारत का संविधान, 1950- अनुच्छेद 21, 38, 39(ख) और 46, सामाजिक न्याय कमजोर वगै अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति- सामाजिक अन्याय से संरक्षण- राज्य का कर्तव्य।

1. प्रत्यर्थी, एक आदिवासी, को राज्य सरकार द्वारा 11 एकड़ और 4 गुंठा भूमि आवंटित की गई थी। अपीलार्थी ने एक समझौता किया जिसके तहत उसके द्वारा उक्त भूमि की खरीद के लिये, बाँम्बे राजस्व संहिता के तहत कलेक्टर से अलगाव की अनुमति मांगी। कलेक्टर और आयुक्त दोनों ने इस आधार पर अनुमति देने से इन्कार कर दिया कि उक्त भूमि को बेचने या गैर-कृषि उपयोग में बदलने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। पीडित, अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की जिसे संक्षेप में खारिज कर दिया गया।

इस न्यायालय में अपील में अपीलार्थी द्वारा यह तर्क दिया गया था कि (1) प्रत्यर्थी द्वारा भूमि पर खेती करने में असमर्थ होने के कारण एक समझौता किया गया था। मूल्यवान प्रतिफल के लिये विक्रय की अनुमति: इसलिये अधिकारियों को हस्तान्तरण की अनुमति देने से इन्कार करना उचित नहीं था।(2) अपीलार्थी को समझौते के अनुसार भूमि का कब्जा सुपुर्द किया गया था, वह संपत्ति हस्तान्तरण अधिनियम की धारा 53-ए के तहत उसे रखने का हकदार है, और (3) अपीलार्थी भूमि पर किये गये सुधारों के लिये मुआवजे का हकदार है।

न्यायालय ने अपील को खारिज करते हुये, अभिनिर्धारित किया

संविधान का अनुच्छेद 46 राज्य को आदेश देता है कि राज्य को शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देना चाहिये व कमजोर वर्गों के लोगों और विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाया जाना चाहिये।

2. भूमि के हस्तान्तरण के लिये पूर्व अनुमति एक शर्त थी। अनुमति देने से पहले, संविधान के अनुच्छेद 46 के तहत सक्षम प्राधिकारी को यह जांच करने का आदेश दिया गया है कि क्या ऐसा अलगाव कानून के तहत शून्य है या संविधान के प्रावधानों का उल्लंघन करता है और क्या अनुमति वैध रूप से दी जा सकती है। इस संबंध में, सक्षम प्राधिकारी को संपत्ति की प्रकृति, प्रस्तावित हस्तान्तरण की विषय-वस्तु और उसके तहत आने वाले पहले से मौजूद अधिकारों को देखने का आदेश दिया गया है और क्या इस तरह के अलगाव या बाधाएं संविधान या कानून के प्रावधानों का उल्लंघन करती है। यदि उत्तर सकारात्मक है, तो बिना किसी अतिरिक्त पूछताछ के अनुमति सीधे खारिज कर दी जाएगी। यदि अनुमति दी भी जाती है, तो इसका निर्णय संविधान और कानून के प्रासंगिक प्रावधानों के आधार पर किया जाएगा। इस मामले में, अधिकारियों ने, हालांकि मामले के पहलू पर ध्यान नहीं दिया था, लेकिन मोटे तौर पर इस आधार पर अनुमति देने से इन्कार कर दिया कि आवंटित भूमि को बेचने या गैर-कृषि

उपयोग में परिवर्तित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसलिये, अनुमति देने से इन्कार करने की कार्यवाही निदेशक सिद्धांतों के भाग 4 में संवैधानिक योजना के अनुरूप है। इसलिये, अनुबंध अधिनियम की धारा 23 के तहत यह समझौता डीटीसी बनाम डीटीसी मजदूर कांग्रेस, 1990 (सप्ली.) 1 एससीआर, 192 में फैसले के अनुसार सार्वजनिक नीति के विपरीत, शून्य है।

3. अपीलार्थी का कब्जा अवैध बना हुआ है। धारा 53ए संपत्ति हस्तान्तरण अधिनियम ऐसी स्थिति में आकर्षित नहीं होती है। अपीलार्थी उक्त भूमि पर किये गये सुधार का मुआवजा पाने का भी हकदार नहीं है।

4. गरीबों, दलितों और जनजातियों का आर्थिक सशक्तिकरण: सामाजिक-आर्थिक लोकतंत्र की एक अभिन्न संवैधानिक योजना और राजनीतिक लोकतंत्र की जीवन शैली है। इसलिये, आर्थिक सशक्तिकरण एक बुनियादी मानव अधिकार और गरीबों, कमजोर वर्गों, दलितों और जनजातियों के लिये जीने, समानता और स्थिति और सम्मान के अधिकार के हिस्से के रूप में एक मौलिक अधिकार है। राज्य ने अपनी विधायी और कार्यकारी कार्यवाही द्वारा दलितों और जनजातियों और अन्य कमजोर वर्गों को उनके आर्थिक सशक्तिकरण के लिये भूमि आवंटित करने की नीति विकसित की है। सरकार ने गरीबों को आर्थिक न्याय प्रदान करने के लिये दो आयामी आर्थिक नीतियां विकसित की। योजना आयोग ने समाज के

कमजोर वर्गों के आर्थिक सशक्तिकरण के लिये डीआरडीएल जैसी नीतियां विकसित की। विशेषकर दलित और जनजातियों के लिये। तात्कालिक भरण-पोषण के लिये अल्पकालिक नीति और स्थिर एवं स्थायी आर्थिक सशक्तिकरण के लिये दीर्घकालिक नीति होनी चाहिये। सभी राज्य सरकारों ने अपनी भूमि या सीलिंग कानूनों के तहत अर्जित भूमि का आवंटन भी उन्हें सौंप दिया। नियोजित योजनाओं के तहत निर्दिष्ट भूमि या संपत्ति के हस्तान्तरण को रोकने के लिये उचित विधायी अधिनियमों को कानून की पुस्तकों में लाया जाता है, और हस्तान्तरण के तहत निषेध लगाया जाता है और इसके उल्लंघन में किसी भी हस्तान्तरण को शून्य या अवैध और निष्क्रिय घोषित करते हुये राज्य या समनुदेशिती को बाध्य नहीं करने के लिये अलगाव पर प्रतिबंध लगाया जाता है। यदि समनुदेशिती अयोग्य घोषित कर दिया गया था या उपलब्ध नहीं था, तो ऐसी भूमि को फिर से शुरू करने पर अधिकारियों को संपत्ति फिर से शुरू करने और नीति के संदर्भ में दलितों और जनजातियों या कमजोर वर्गों के बीच उत्तराधिकारी या अन्य पात्र को सौंपने का आदेश दिया जाता है। यह निषेध संविधान की प्रस्तावना के साथ पढ़े गये अनुच्छेद 14, 21, 38, 39 और 46 के तहत आर्थिक सशक्तिकरण की संवैधानिक नीति को प्रभावी बनाने के लिये है।

5. कानून के शासन के माध्यम से सामाजिक क्रांति के लिये संविधान की प्रतिबद्धता का मूल, मूल अधिकारों और निर्देशक सिद्धांतों को

एक-दूसरे के पूरक ओर पूरक के रूप में लागू करना है। प्रस्तावना, मौलिक अधिकार और निर्देशक सिद्धांत त्रिमूर्ति: संविधान की अंतरात्मा है। राजनीतिक लोकतंत्र को स्थित होना होगा। सामाजिक-आर्थिक लोकतंत्र को मजबूत जड़े जमानी चाहिये और इसे जीवन का एक तरीका बनाना चाहिये। इसलिये, राज्य का दायित्व है कि वह समाज के गरीबों, कमजोर वर्गों, दलितों और जनजातों को आजीविका के पर्याप्त साधन प्रदान करे और समुदाय के भौतिक संसाधनों को सामान्य कल्याण आदि के लिये वितरित करे।

देवती बालासुब्रह्मण्यम बनाम जिला कलेक्टर नेल्लोर, 1986(2) एएलटी 1  
डीटीसी बनाम डीटीसी मजदूर कांग्रेस (1990) सप्ली.1एससीआर 192,  
संदर्भित-

महात्मा गांधी, सोशलिज्म ऑफ माय कन्सैप्शन, बी.के.रॉय,  
सोशियो-पॉलिटिकल व्यूज ऑफ विवेकानन्द, राब्सन, वेलफेयर स्टेट एंड  
वेलफेयर सोसाईटी, एम.पी.हॉल, द सोशल सर्विसेज ऑफ मॉडर्न इंग्लैंड,  
एस.जी.स्टर्मी, इन्कम एंड इकोनॉमिक्स वेलफेयर, एनसाईक्लोपीडिया  
ब्रिटानिका, कौटिल्य, अर्थशास्त्र, पिटर सिंगर, प्रैक्टिकल एथिक्स, ग्रेनविले  
ऑस्टिन, द इंडियन कास्टीट्यूशन सीमलेस वेब, इलियट डोइस, लिबर्टी एंड  
वेलफेयर, रोबर्ट एल, साईमन, ट्रबल्ड वाटर्स ग्लोबल जस्टिस एंड ओशन  
रिसोर्सज, डायस, ज्यूरिसपुडेन्स, जस्टिस गजेन्द्र गडकर, द कॉन्स्टिट्यूशन

ऑफ इंडिया इट्स फिलोस्फी एंड पोस्टुलेट्स।

दीवानी अपील क्षेत्राधिकार- 1977 दीवानी अपील नंबर-952

बॉम्बे उच्च न्यायालय के एस.सी.ए. नंबर 4618/1976 में पारित  
निर्णय एवं आदेश दिनांक 24.09.1976 से

वी.एन.गनपुले व ए.एम. खानवीलकर अपीलार्थी की ओर से।

ए.एस. भासमे प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय द्वारा यह आदेश दिया गया था।

अहमदनगर जिले के संगमनेर बदर्क गांव में सर्वेक्षण संख्या 265 की भूमि 11 एकड़ 4 गुंठा, जो राज्य सरकार की थी, जून, 1960 में पहले प्रत्यर्थी जो एक आदिवासी है, को आवंटित की गई थी। अपीलकर्ता ने दिनांक 27, जून 1968 को आदिवासी आवंटी के साथ शुरुआत में 5 एकड़ जमीन और बाद में पूरी जमीन खरीदने के लिये एक समझौता किया और कलेक्टर से हस्तान्तरण की अनुमति मांगी। कलेक्टर और कमिश्नर दोनों द्वारा ही उन्हें अनुमति देने से इन्कार कर दिया था। अपीलकर्ता ने रिट याचिका के माध्यम से उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका को सरसरी तौर पर खारिज कर दिया। इस प्रकार यह अपील विशेष अनुमति द्वारा।

अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गणपुले ने तर्क दिया कि पहले प्रत्यर्थी आदिवासी होने के कारण भूमि पर खेती करने में असमर्थ था और इसलिये कलेक्टर की अनुमति के अधीन मूल्यवान प्रतिफल के लिये भूमि बेचने के लिये कानूनी रूप से समझौता किया। जिला कलेक्टर ने हस्तान्तरण की अनुमति देने से इन्कार करके त्रुटि की थी क्योंकि बाँम्बे राजस्व संहिता ऐसी शक्ति देती है। अपीलकर्ता को समझौते के अनुसार भूमि को कब्जे में शामिल कर लिया गया और वह कब्जे में रहा और धारा 53 संपत्ति अंतरण अधिनियम के तहत इसे बरकरार रखने का हकदार है। अधिकृत अधिकारियों द्वारा हस्तान्तरण की अनुमति देने से इन्कार करना उचित नहीं था। अपीलकर्ता ने भूमि सुधार किया था और इसलिये वह अपने द्वारा किये गये सुधारों के लिये मुआवजे का हकदार है। इस प्रश्न में व्यापक संवैधानिक आयाम शामिल हैं। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी ने "सोशलिज्म ऑफ माय कन्सेप्शन" में पृष्ठ 82-83 पर कहा है कि:-

“हर इंसान को जीने का अधिकार है और इसलिये, खुद को खिलाने के लिये साधन ढूँढने का और, जहाँ आवश्यकता हो, खुद को कपड़े और घर बनाने का अधिकार है। एक सुव्यवस्थित समाज में किसी भी आजीविका की सुरक्षा होनी चाहिये, और पाया गया है यह सबसे आसान बात है। वास्तव में किसी देश में सुव्यवस्था की कसौटी उसके पास



करोड़पतियों की संख्या नहीं है, बल्कि उसकी जनता के बीच भुखमरी का अभाव है। आर्थिक समानता के लिये काम करने का मतलब पूंजी और श्रम के बीच के शाश्वत संघर्ष को खत्म करना है। इसका अर्थ है एक ओर उन चंद अमीरों को समतल करना जिनके हाथों में देश की अधिकांश संपत्ति केन्द्रित है, और दूसरी ओर अर्द्ध भूखे, नग्न लाखों लोगों कास्तर बढ़ाना। एक हिंसक और खूनी क्रांति एक है, एक दिन निश्चित है, जब तक कि धन और धन से मिलने वाली शक्ति का स्वेच्छा से परित्याग न किया जाए और उसे आम भलाई के लिये साझा न किया जाए।”

रविन्द्र नाथ टैगोर ने एक गरीब किसान की दुर्दशा को काव्यात्मक रूप से इस प्रकार चित्रित किया है-

“सदियों के भार से झुका हुआ वह झुकता है, अपनी कुदाल पर और जमीन पर देखता है, उसके चेहरे पर युगों का खालीपन है, और उसकी पीठ पर दुनिया का बोझ है”

जैसा कि बी.के.राय ने अपने “ -पॉलिटिकल व्यूज ऑफ विवेकानन्द” में उद्धृत किया है, 52 साल के स्वामी विवेकानन्द ने सामाजिक और आध्यात्मिक न्याय पर बोलते हुये कहा है, “मैं ऐसे भगवान में विश्वास नहीं करता जो मुझे यहाँ रौं रौं दे सकता, गरीबों

को स्वर्ग में शाश्वत आनन्द दे सकता है।" पुनः भारत का उत्थान करना है, गरीबों को खाना खिलाना है, शिक्षा का प्रसार करना है, और पुरोहिती की बुराई को दूर करना है... अधिक रोटी, हर व्यक्ति के लिये अधिक अवसर।

याद रखे गरीबों के बारे में विवेकानन्द ने क्या कहा था:

“महसूस करो, मेरे बच्चों, महसूस करो, गरीबों, अज्ञानियों, वंचितों के लिये, तब तक महसूस करो जब तक हृदय की गति थम न जाए, मस्तिष्क चकरा न जाए और तुम्हें लगे कि तुम पागल हो जाओगे.. एक अनुसूचित जाति के माता-पिता का विलाप उनके बेटे को उनकी दुर्दशा के बारे में इस प्रकार मार्मिक रूप से याद दिलाता है:-

“चुप रहो, मेरे बच्चे, मत रोओ, मेरे खजाने, रोना व्यर्थ है, क्योंकि दुश्मन कभी तुम्हारा दर्द नहीं समझेगा। क्योंकि समुद्र की अपनी सीमाएं हैं, जेलों की अपनी दीवारें हैं, लेकिन हमारी पीड़ा और यातना की कोई सीमा नहीं है।

इसलिये पॉप पायस ने कहा है कि संपत्ति की व्यवस्था “सामाजिक व्यवस्था का एक आदर्श, पुरुषों की पहल के लिये एक आवश्यक पूर्वधारण, जीवन के लौकिक और परलौकिक दोनों छोरों को सुरक्षित करने के लिये काम करने के लिये एक प्रेरणा होनी

चाहिये। इसलिये मनुष्य की गरिमा और स्वतंत्रता।" संपत्ति का अधिकार एक बुनियादी नागरिक अधिकार है जिसे लंबे समय से मान्यता दी गई है।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1931 में अपने प्रस्ताव में घोषणा की कि "जनता के शोषण को समाप्त करने के लिये, राजनीतिक स्वतंत्रता में भूखे लाखों लोगों की वास्तविक आर्थिक स्वतंत्रता शामिल होनी चाहिये, और आर्थिक जीवन के संगठन को न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप होना चाहिये।" इसलिये संविधान के संस्थापकों ने लोगों की ओर से संविधान बनाते समय, प्रस्तावना में "हम भारत के लोग" के माध्यम से घोषणा की, जो संविधान का हिस्सा है, प्रत्येक नागरिक को सामाजिक, आर्थिक और न्याय सुनिश्चित करने के लिये राजनीतिक, स्थिति की समानता और स्वतंत्रता के साथ अवसर की समानता, एकजुट और एकीकृत भारत में उनके बीच भाईचारे और व्यक्ति की गरिमा को बढ़ावा देने के लिये, मौलिक अधिकारों के अध्याय 3 और निदेशक सिद्धांतों के अध्याय 4 को नाजनीतिक न्याय हासिल करते हुये सामाजिक, आर्थिक न्याय प्रदान करने के लिये विकसित किया गया है और इन अध्यायों में संप्रभु लोकतांत्रिक गणराज्य में समतावादी सामाजिक व्यवस्था प्राप्त करने की नींव रखी गई है जिसे बाद में संविधान 42 वें (संशोधन)द्वारा संप्रभु समाजवादी धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में कार्य करना संशोधित किया गया था।

राॅब्सन ने अपने "वेलफेयर स्टेट एंड वेलफेयर सोसाईटी" में पेज 11 में कहा है-

“कल्याणकारी राज्य के अंतर्निहित विचार कई अलग-अलग स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। फ्रांसीसी क्रांति से स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की धारणाएं आईं। बेंथम और उनके शिष्यों के उपयोगितावादी दर्शन से सबसे बड़ी संख्या का विचार आया। विस्मार्क और बेवरिज से सबसे बड़ी संख्या का विचार आया। सामाजिक बीमा और सामाजिक सुरक्षा की अवधारणाएं। फैंबियन समाजवादियों से बुनियादी उद्योगों और आवश्यक सेवाओं के सार्वजनिक स्वामित्व के सिद्धांत आए। टावनी से समानता पर नए सिरे से जोर दिया गया और सामाजिक गतिविधि के मुख्य स्रोत के रूप में लोभ की अस्वीकृति हुई। वेब्स से प्रस्ताव आए गरीबी के कारणों को खत्म करने और समाज के आधार को साफ करने के लिये।”

राॅब्सन ने पेज 192 पर कहा। “कल्याणकारी राज्य का मूल उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समानता की पर्याप्त डिग्री प्राप्त करना और एक नागरिक के रूप में अपने काम में आत्म-अभिव्यक्ति, अवकाश और सामाजिक न्याय प्राप्त करना है।”

राॅब्सन द्वारा उद्धृत जाॅर्ज वॉटसन के अनुसार, कल्याणकारी राज्य का तात्पर्य पुनर्वितरण से है- सभी के लिये बुनियादी जीवन स्तर की उपलब्धि के लिये आय का निर्धारण। एमपी हाॅल ने अपने "द शोषल सर्विसेज आॅफ माॅडर्न इंगलैंड" में 1952 संस्करण के पृष्ठ 303 में कहा है कि "कल्याणकारी राज्य की विशिष्ट विशेषता यह है कि राज्य के माध्यम से कार्य करने वाले समुदाय द्वारा ऐसे साधन प्रदान करने की जिम्मेदारी की कल्पना की जाती है जिससे उसके सभी सदस्य स्वास्थ्य, आर्थिक सुरक्षा और सभ्य जीवन के न्यूनतम मानक तक पहुँच सकें और उसके अनुसार साझा कर सकें इसकी सामाजिक और सांस्कृतिक विरासत में उनकी क्षमता।" एसजी स्टर्मी ने अपने "आय और आर्थिक कल्याण" में पेज 142 पर कहा है कि "कल्याणकारी राज्य को बड़े पैमाने पर समुदाय को अपने कमजोर सदस्यों के प्रति सामुहिक जिम्मेदारी निभाने में मदद करने के लिये सकारात्मक कदम उठाने चाहिये और उनकी सहायता के लिये सकारात्मक कदम उठाने चाहिये।

एनसाईक्लोपीडिया ब्रिटानिका, खंड 23 पृष्ठ 389 में, सामाजिक कल्याण को "कानूनों और संस्थानों की प्रणाली के रूप में परिभाषित किया गया है जिसके माध्यम से एक सरकार अपने नागरिकों के आर्थिक और सामाजिक कल्याण की रक्षा और बढ़ावा देने के प्रयास करती है जो आमतौर पर विभिन्न रूपों पर आधारित होती है।" बेरोजगारी, दुर्घटना,

बीमारी और बुढ़ापे के खिलाफ सामाजिक बीमा।" कल्याणकारी राज्य भारतीय भूमि से अलग नहीं है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में, यह विशेष रूप से प्रदान किया गया था कि "प्रजा की खुशी में राजा की खुशी निहित है। जो लोगों के लिये अच्छा है वह (राजा के लिये) अच्छा है। जो राजा के लिये सुखद है वह उसके लिये अच्छा नहीं है।" जो अकेले लोगों के लिये अच्छा है वह उसके लिये अच्छा है।" वेदों और महाकाव्यों में राजा के कर्तव्यों का विविध रूप से उल्लेख किया गया है कि राजा पितृसत्तात्मक और पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण से अधिक कार्य करता है। राजा अशोक, मौर्य, अकबर, श्रीकृष्ण देवराय और काकतीय आदि ने लोगों के कल्याण के लिये काम किया। विश्व बैंक के अध्यक्ष राॅबर्ट मैकनामारा ने अपने "प्रेक्टिकल एथिक्स, 1979" में पीटर सिंगर का हवाला देते हुये कहा कि समाज का नैतिक दायित्व है कि वह उन लोगों को पूर्ण गरीबी के स्तर से उपर उठाए जो पूर्ण गरीबी में हैं।

मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा, 1948, अनुच्छेद 1 आश्वासन देती है कि "सभी मनुष्य स्वतंत्र पैदा हुये हैं और गरिमा और अधिकारों में समान है।" अनुच्छेद 3 आश्वासन देता है कि "प्रत्येक व्यक्ति को जीवन, स्वतंत्रता ओर व्यक्ति की सुरक्षा का अधिकार है।" अनुच्छेद 17 घोषित करता है कि "प्रत्येक व्यक्ति को अकेले और दूसरों के साथ मिलकर संपत्ति रखने का अधिकार है।" अनुच्छेद 22 में परिकल्पना की गई है कि "प्रत्येक

व्यक्ति को, समाज के सदस्य के रूप में, सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है और वह राष्ट्रीय प्रयास और प्रत्येक राज्य के संसाधनों के माध्यम से आर्थिक, सामाजिक और प्राप्ति का हकदार है।" सांस्कृतिक अधिकार उसकी गरिमा और उसके व्यक्तित्व के मुक्त विकास के लिये अपरिहार्य है।" अनुच्छेद 25 आश्वासन देता है कि "प्रत्येक व्यक्ति को भोजन, कपड़े, आवास और चिकित्सा देखभाल और आवश्यक सामाजिक सेवाओं सहित अपने और अपने परिवार के स्वास्थ्य और कल्याण के लिये पर्याप्त जीवन स्तर का अधिकार है, और बेरोजगारी की स्थिति में सुरक्षा का अधिकार है।" बीमारी, विकलांगता, विधवापन, बुढ़ापा या उसके नियंत्रण से परे परिस्थितियों में आजीविका की कमी।" इसी तरह यूरोपीय कन्वेंशन में दिये गये सामाजिक, नागरिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकार भी हैं।

विकास के अधिकार पर घोषणा, जिस पर भारत एक हस्ताक्षरकर्ता है, यह मान्यता देता है कि विकास एक व्यापक आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य पूरी आबादी और सभी की भलाई में निरन्तर सुधार करना है। व्यक्तियों को विकास में उनकी सक्रिय, स्वतंत्र और सार्थक भागीदारी और उसके परिणामस्वरूप होने वाले लाभों के उचित वितरण के आधार पर। अनुच्छेद-1 आश्वासन देता है कि "विकास का अधिकार एक अविभाज्य मानव अधिकार है जिसके आधार पर प्रत्येक मानव व्यक्ति और सभी लोग आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और

राजनीतिक विकास में भाग लेने, योगदान करने और आनंद लेने के हकदार हैं, जिसमें सभी मानव अधिकार और मनोरंजन शामिल हैं। मौलिक स्वतंत्रता को पूरी तरह से महसूस किया जा सकता है।” अनुच्छेद-2 उसके विकास के अधिकार में सक्रिय भागीदारी और लाभ का अधिकार सुनिश्चित करता है। अनुच्छेद-3 राज्य को उचित राष्ट्रीय विकास नीतियाँ बनाने का कर्तव्य बताता है जिसका उद्देश्य विकास में उनकी सक्रिय, स्वतंत्र और सार्थक भागीदारी के आधार पर पूरी आबादी और सभी व्यक्तियों की भलाई में निरन्तर सुधार करना है। वहाँ से प्राप्त होने वाले लाभों का उचित वितरण। अनुच्छेद 3(1) में कहा गया है कि विकास के अधिकार की प्राप्ति के लिये अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण करना राज्य की प्राथमिक जिम्मेदारी है। विशेष रूप से, अनुच्छेद 4(1) राज्य को अपने कर्तव्य के रूप में निर्देश देता है कि वह विकास के अधिकार की पूर्ण प्राप्ति के लिये सुविधाएं प्रदान करने के लिये व्यक्तिगत और सामुहिक रूप से कदम उठाए। अनुच्छेद 8(1) में कहा गया है कि राज्य को विकास के अधिकार की प्राप्ति के लिये आवश्यक उपाय करने चाहिये। अनुच्छेद 10 में कहा गया है कि विकास के अधिकार का पूर्ण अभ्यास और प्रगतिशील वृद्धि को सुनिश्चित करने के लिये कदम उठाए जाने चाहिये, जिसमें विधायी और कार्यकारी उपायों के लिये नीति, विधायी और अन्य उपायों का निर्माण, अपनाना और कार्यान्वयन शामिल है।



भारत में संविधान के अनुच्छेद 38 में प्रावधान है कि "राज्य एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था को सुरक्षित और संरक्षित करके लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने का प्रयास करेगा जिसमें न्याय, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक, सभी संस्थानों को सूचित किया जाएगा।" राष्ट्रीय जीवन का, विशेष रूप से आय में असमानताओं को कम करने का प्रयास करें और न केवल व्यक्तियों के बीच, बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले या विभिन्न व्यवसायों में लगे लोगों के समूहों के बीच स्थिति, सुविधाओं और अवसरों में असमानताओं को खत्म करने का प्रयास करें। अनुच्छेद 39(बी) राज्य को निर्देश देता है कि "समुदाय के भौतिक संसाधनों को स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार वितरित किया जाए जिसमें आम भलाई के लिये सर्वोत्तम हो।" सभी मानवाधिकार मनुष्य की गरिमा और मूल्य से उत्पन्न होते हैं। लोकतंत्र व्यक्ति को उत्कृष्टता प्राप्त करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान करता है। सभी भारतीय नागरिकों के लिये जीवन के अधिकार को सार्थक बनाने के लिये निदेशक सिद्धांतों में सामाजिक-आर्थिक सामग्री व्यापक है।

ग्रेनविले आस्टिन ने अपने "द इंडियन कास्टीट्यूशन सीमलेस वेब", राजीव गांधी इंस्टीट्यूट फॉर कंटेम्प्रेरी स्टडीज में व्याख्यान में कहा कि संविधान के संस्थापकों ने संविधान में भारत के लिये तीन महान लक्ष्य उठाये: (1)-इसके माध्यम से एक अधिक समतापूर्ण समाज प्राप्त करना। एक परिवर्तन जिसे उन्होंने सामाजिक क्रांति कहा। (2)-राष्ट्रीय एकता और

अखंडता को बनाए रखना और बढ़ाना- और (3)-लोकतंत्र की भावना के साथ-साथ संस्थानों की स्थापना करना। भारत तब तक सही मायने में लोकतांत्रिक नहीं हो सकता जब तक कि सामाजिक क्रांति ने न्यायपूर्ण समाज की स्थापना नहीं की। राष्ट्रीय एकता के बिना, सामाजिक और आर्थिक सुधार या लोकतंत्र की दिशा में बहुत कम प्रगति की जा सकती है। समान रूप से, लोकतंत्र और सुधार के बिना, भारत की अपनी एकता को बनाए रखने या बढ़ाने की संभावना नहीं थी। न्यायिक व्यवस्था की विशेष महत्वपूर्ण भूमिका है। एक कल्याणकारी राज्य में त्रिमूर्ति के रूप में स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व और सामाजिक कल्याण घनिष्ठ साथी हैं। वे आत्म-अभिव्यक्ति और संतुलित विकास के लिये परिस्थितियाँ बनाने के लिये एक-दूसरे के पूरक और अनुपूरक साधन हैं ताकि प्रत्येक नागरिक जिम्मेदार बने और पुनः लोकतंत्र की सफलता के लिये उत्तरदायी हो।

इलियट डोइस ने अपने "लिबर्टी एंड वेलफेयर", 1957 संस्करण के पेज नंबर 17 में कहा है कि "कल्याण वास्तव में स्वतंत्रता का एक रूप है क्योंकि यह पुरुषों को उन सामाजिक परिस्थितियों से मुक्त करता है जो उनकी पंसद को सीमित करती है और उनके आत्म विकास को उज्ज्वल करती है। संविधान का अनुच्छेद 46 राज्य को "विशेष देखभाल के साथ शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देने का आदेश देता है।" लोगों के कमजोर वर्गों की और विशेष रूप से अनुसूचित जाति और अनुसूचित

जनजाति की और उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाएगा।” डा० बी. आर. अंबेडकर, संविधान के मसौदे पर बहस को समाप्त करते हुये संविधान सभा के पटल पर कहा गया कि संविधान में नीति-निर्देशक सिद्धांतों को शामिल करने का वास्तविक कारण और औचित्य यह है कि सत्ता में रहने वाली पार्टी अपनी राजनीतिक विचार धाराओं की उपेक्षा करते हुये अपने वैचारिक प्रभाव से दूर नहीं जाएगी, लेकिन होना चाहिये” आर्थिक लोकतंत्र के आदर्श का सम्मान करें जो संविधान की नींव और आंकाक्षा है।” जो कोई भी सरकारी सत्ता पर कब्जा कर सकता है वह सत्ता का प्रयोग करने के लिये स्वतंत्र नहीं होगा, जो वह करना चाहता है। वह उन्हें नजरअंदाज नहीं कर सकते, हो सकता है कि उन्हें कानून के उल्लंघन के लिये अदालत में जवाब न देना पड़े, लेकिन अगला चुनाव आने पर उन्हें निश्चित रूप से मतदाताओं के सामने जवाब देना होगा।” डा० अंबेडकर ने आगे कहा कि -

“हमें अपने राजनीतिक लोकतंत्र को एक सामाजिक लोकतंत्र भी बनाना चाहिये। राजनीतिक लोकतंत्र तब तक टिक सकता है जब तक इसके आधार पर सामाजिक लोकतंत्र न हो। सामाजिक लोकतंत्र का क्या मतलब है? इसका मतलब जीवन का एक तरीका है जो स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे को पहचानता है, जीवन के सिद्धांत।

स्वतंत्रता समानता और बंधुत्व के इन सिद्धांतों को त्रिमूर्ति में अलग-अलग वस्तुओं के रूप में नहीं माना जाना चाहिये। वे इस अर्थ में त्रिमूर्ति का एक संघ बनाते हैं कि एक को दूसरे से अलग करना लोकतंत्र के मूल उद्देश्य को विफल करना है। ....राजनीति में हम एक व्यक्ति एक वोट और एक वोट एक मूल्य के सिद्धांतों को मान्यता देंगे। अपने सामाजिक और आर्थिक जीवन में हम अपनी सामाजिक और आर्थिक संरचना के कारण इसे जारी रखेंगे। एक वोट एक मूल्य के सिद्धांत को नकारें। .... यदि हम इसे लंबे समय तक नकारते रहे, तो इस विरोधाभास को जल्द से जल्द खत्म करना होगा या अन्यथा जो लोग असमानता से पीड़ित हैं वे राजनीतिक लोकतंत्र की संरचना को नष्ट कर देंगे जिसे इस विधानसभा ने इतनी मेहनत से बनाया है।”

संविधान का अनुच्छेद 21 जीवन के अधिकार का आश्वासन देता है। जीवन के अधिकार को सार्थक और प्रभावी बनाने के लिये इस न्यायालय ने मंहगी व्याख्या की और शिक्षा, स्वास्थ्य, त्वरित सुनवाई, समान काम के लिये समान वेतन को मौलिक अधिकारों के रूप में अपने दायरे में लाया गया है। अनुच्छेद 14, 15 और 16 भेदभाव पर रोक लगाते हैं और समानता प्रदान करते हैं। एक समाजवादी गणराज्य के रूप में संविधान की

प्रस्तावना आर्थिक असामनताओं को दूर करने और सभ्य जीवन स्तर के लिये सुविधाएं और अवसर प्रदान करने और समाज के कमजोर वर्गों, विशेष रूप से अनुसूचित जातियों यानी दलितों और अनुसूचित जातियों के आर्थिक हितों की रक्षा करने की कल्पना करती है।" ट्राईब्स यानी जनजातियां और उन्हें सभी प्रकार के शोषण से बचाना। 26 जनवरी, 1950 के बाद न जाने कितने दिन आये ओर गये लेकिन गरीबों के जीवन में कोई पता नहीं बदला और अमीरी-गरीबी के बीच की खाई धीरे-धीरे बढ़ती ही गई और पाटने के कगार पर पहुंच गई।

रॉबर्ट एल, साईमन ने अपनी 'ट्रबल्ड वाटर्स - ग्लोबल जस्टिस एंड ओशन रिसोर्सेज (1980) में कहा है कि "बड़े पैमाने पर असमान अवसरों की दुनिया में, जहाँ कुछ सापेक्ष समृद्धि में पैदा होते हैं और अन्य निर्वाह अर्थव्यवस्था या इससे भी बदतर स्थिति में देखने के लिये पैदा होते हैं, संसाधनों को स्वतंत्रतावादी के रूप में उन लोगों की विशेष संपत्ति के रूप में देखते हैं जो उनका शोषण करना या अन्यथा उन्हें वैध तरीके से हासिल करना प्रारंभिक असमानताओं को कायम रखता है या बढ़ाता है।" पृष्ठ 198 पर उन्होंने उल्लेख किया है कि जीवन का अधिकार एक सकारात्मक अधिकार है। उनका कहना है कि "जीवन के अधिकार को एक सकारात्मक अधिकार माना जाता है यदि इसके लिये न केवल यह आवश्यक है कि हम अधिकारों को बमुश्किल मारने से बचें, बल्कि यह भी कि हम उसे बुनियादी

आवश्यकताएं प्रदान करें जहाँ वह स्वयं ऐसा करने में असमर्थ हैं।” डायस द्वारा अपने न्याय शास्त्र में 5 वें संस्करण के पृष्ठ संख्या 85 में कहा गया है कि लोकतंत्र तब तक व्यावहारिक है जब तक लोगों के बीच साझा मूल्यों और आकांक्षाओं का एक बड़ा क्षेत्र मौजूद है और जहाँ उनमें मतभेदों से उपर उठने की परिपक्वता है।”

सभी नागरिकों के लिये आजीविका के पर्याप्त साधन उपलब्ध कराना और समुदाय के भौतिक संसाधनों का सामान्य कल्याण के लिये वितरण करना, गरीबों, दलितों और जनजातियों को बुनियाद जरूरतों को पूरा करने में सक्षम बनाना ताकि भारतीय संरचना में मूलभूत परिवर्तन लाया जा सके। समाज को जाति, उपजाति, पंथ, धर्म, नस्ल, भाषा और लिंग के आधार पर लोगों के बीच अलगाव की अभेद्य दीवारें खड़ी करके विभाजित किया गया था। इस प्रकार आर्थिक सशक्तिकरण स्थिति की समानता, व्यक्ति की गरिमा और समान अवसर को सत्य बनाने की नींव है। कानून के शासन के माध्यम से सामाजिक क्रांति के लिये संविधान की प्रतिबद्धता का मूल, मूल अधिकारों और निर्देशक सिद्धांतों को एक-दूसरे के पूरक और पूरक के रूप में लागू करना है। प्रस्तावना, मौलिक अधिकारों और निदेशक सिद्धांत- त्रिमूर्ति संविधान की अंतरात्मा है। राजनीतिक लोकतंत्र को स्थिर होना होगा। सामाजिक-आर्थिक लोकतंत्र की मजबूत जड़े जमानी चाहिये और यह जीवन का एक तरीका बनना चाहिये। इसलिये राज्य का दायित्व

है कि वह समाज के गरीबों, कमजोर वर्गों, दलितों और जनजातियों को आजीविका के पर्याप्त साधन प्रदान करे और समुदाय के भौतिक संसाधनों को सामान्य कल्याण आदि के लिये वितरित करे।

इस न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश डॉ न्यायमूर्ति गजेन्द्र गडकर ने अपने 'दि कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ इंडिया, इट्स फिलोस्फी एंड पोस्टुलेट्स 1969 के पृष्ठ संख्या 18 में कहा है कि "निर्देशक सिद्धांतों का अंतिम उद्देश्य भारतीय जनता को सकारात्मक अर्थों में मुक्त करना है ताकि उन्हें सदियों की जबरदस्ती, समाज और प्रकृति द्वारा और अज्ञानता से खतरे में पड़ी निष्क्रियता से और उन घृणित स्थितियों से मुक्त किया जा सके जो उन्हें अपने लक्ष्य को पूरा करने से रोकती थी।" सर्वोत्तम स्वयं, इसलिये मानवीय गरिमा की रक्षा और संरक्षण के लिये व्यक्ति को नागरिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकार आवश्यक हैं, गरीबों, दबे-कुचले और वंचितों, दलितों और जनजातियों को राष्ट्रीय स्तर पर आत्मसात करने के लिये सामाजिक और आर्थिक अधिकार अनिवार्य रूप से अपरिहार्य हैं। एकीकृत भारत में लोगों के बीच एकता, भाईचारा पैदा करने के लिये परम समतापूर्ण समाज और लोकतांत्रिक जीवन शैली की मुख्य धारा है।

ऐसा न हो कि अध्याय 3 में मौलिक अधिकार समाज के गरीबों, वंचितों और वंचित वर्गों के लिये भ्रम बनकर रह जाएं, वंचित लोग अपने

मौलिक अधिकारों का प्रभावी ढंग से प्रयोग नहीं कर सके इसलिये समाज को उन्हें मौलिक अधिकारों के अध्याय 3 में दी गई स्वतंत्रता का आनन्द लेने में मदद करनी चाहिये।

इस न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश न्यायमूर्ति के.के.मैथ्यू ने अपने लोकतंत्र समानता और स्वतंत्रता के पृष्ठ 37 में कहा है कि "संपत्ति एक कानूनी संस्था है जिसका सार धन में कुछ निजी अधिकारों का निर्माण और संरक्षण है। संस्था कई अलग-अलग कार्य करती है। इनमें से एक कार्य प्रत्येक निजी व्यक्ति या संगठन की गतिविधियों के चारों ओर एक दायरा बनाना है। उस दायरे के भीतर, सरकार को बाहर की तुलना में अधिक स्वतंत्रता प्राप्त है।" पृष्ठ 38 पर विद्वान न्यायाधीश ने कहा कि "मिश्रित अर्थव्यवस्था वाले समाज में, कौन आश्वस्त हो सकता है कि संपत्ति के संबंध में स्वतंत्रता को व्यक्तिगत स्वतंत्रता का एक पहलू नहीं माना जा सकता है, संपत्ति के बिना लोगों में गुलाब बनने की प्रवृत्ति होती है। वे दूसरों की संपत्ति बन जाते हैं क्योंकि उनके पास स्वयं कोई संपत्ति नहीं है। वे कहने लगेंगे: "हमें गुलाम बनाओ, लेकिन हमें खिलाओ।" स्वतंत्रता स्वाभिमान की जड़े संपत्ति में हैं। संपत्ति की संस्था को बदनाम करने का मतलब विशाल बहुमत के लोगों की सहज प्रवृत्ति और अनुसरण की स्थिर वस्तु द्वारा दी गई कठोर वास्तविकता के सबूतों से अपनी आंखें बंद करना है। उचित परिस्थितियों में संपत्ति के हितों की सुरक्षा को काफी हद तक



स्वतंत्रता का एक पहलू माना जा सकता है।" पृष्ठ 39 पर उन्होंने आगे कहा कि "पुरुषों को स्वतंत्र होने का साहस देने का इससे बेहतर कोई तरीका नहीं है कि उन्हें एक योग्यता सुनिश्चित की जाए जिस पर वे भरोसा कर सकें। यही कारण है कि संविधान निर्माता चाहते थे कि सामग्री का स्वामित्व हो समुदाय के संसाधनों को इस प्रकार वितरित किया जाना चाहिये कि आम हित की पूर्ति हो सके। लोग रिश्ते और स्थिति के आधार पर एक समाज बनता है।" पृष्ठ 56 पर उन्होंने कहा कि "आर्थिक अधिकार मनुष्य को भय से मुक्ति और अभाव से मुक्ति प्रदान करते हैं, और वे मूल्यों के पैमाने पर, यदि अधिक नहीं तो उतने ही महत्वपूर्ण हैं।"

प्रोफेसर हांकिंग ने विवेकपूर्वक कहा है "समकालीन चेतना के लिये एक सिद्धांत बन गया है कि प्रावधान के बिना कोई स्वतंत्रता नहीं हो सकती। मानव जाति के एक बड़े हिस्से के लिये स्वतंत्रता का मुख्य कार्य आर्थिक स्तर पर है। लेकिन यह सच है कि प्रावधान, काम और अवकाश पर्याप्त नहीं है, सबसे प्रचुर प्रावधान मानव स्वतंत्रता नहीं है जब तक कि कोई व्यक्ति अपने विचार और कार्य की शक्तियों का अबाधित निदेशक न बना रहे'

नींव है। सुनिश्चित कब्जा समृद्धि, व्यक्ति की गरिमा और उत्कृष्टता की खोज के लिये एक स्थायी जड़ है। न्याय मानव आचरण का एक गुण है और कानून का शासन सामाजिक-आर्थिक न्याय स्थापित करने के लिये

अपरिहार्य आधार है। राजनीतिक अर्थव्यवस्था के सिद्धांत में जनता की भलाई की व्याख्या शामिल होनी चाहिये जो न्याय पर आधारित हो जो लोगों का मार्गदर्शन करेगी जब आर्थिक और सामाजिक नीति के प्रश्न विचाराधीन हों।

रॉल्स ने अपने "न्याय के सिद्धांत" में पृष्ठ 259 पर कहा है कि-

"शुरु से ही मैंने इस बात पर जोर दिया है कि निष्पक्षता के रूप में न्याय समाज की बुनियादी संरचना पर लागू होता है। यह बंद प्रणालियों के रूप में देखे जाने वाले सामाजिक रूपों की रैंकिंग के लिये एक अवधारणा है। इन पृष्ठभूमि व्यवस्थाओं से संबंधित कुछ निर्णय मौलिक हैं और इन्हें टाला नहीं जा सकता है। वास्तव में, संचयी सामाजिक और आर्थिक कानून का प्रभाव बुनियादी संरचना को निर्दिष्ट करना है। इसके अलावा, सामाजिक व्यवस्था अपने नागरिकों की ईच्छाओं और आकांक्षाओं को आकार देती है। यह कुछ हद तक यह निर्धारित करती है कि वे किस प्रकार के व्यक्ति बनना चाहते हैं। इस प्रकार एक आर्थिक प्रणाली न केवल मौजूदा चाहतों और जरूरतों को पूरा करने के लिये एक संस्थागत उपकरण है, बल्कि भविष्य में जरूरतों को पैदा करने और उन्हें तैयार करने का एक तरीका भी है। लोग

अपनी वर्तमान ईच्छाओं को पूरा करने के लिये अब एक साथ कैसे काम करते हैं, यह बाद में उनकी ईच्छाओं को प्रभावित करता है, वे किस तरह के व्यक्ति होंगे। बेशक, ये मामले पूरी तरह से स्पष्ट हैं और इन्हें हमेशा मान्यता दी गई है। मार्शल और माक्रस जैसे अलग-अलग अर्थशास्त्रियों ने इन पर जोर दिया था। चूँकि आर्थिक व्यवस्थाओं के ये प्रभाव होते हैं, और वास्तव में ऐसा होना भी चाहिए, इसलिये इन संस्थानों के चुनाव में मानव भलाई के कुछ दृष्टिकोण और इसे साकार करने के लिये संस्थान के डिजाइन शामिल होते हैं। इसलिये यह चुनाव नैतिक और राजनीतिक के साथ-साथ आर्थिक आधार पर भी किया जाना चाहिये।”

देवती बालासुब्रहमण्यम बनाम जिला कलेक्टर नेल्लोर, 1986(2)एएलटी 1 में आंध्रप्रदेश उच्च न्यायालय ने इस सवाल पर विचार किया कि क्या किसी जिले में 20 प्रतिशत उचित मूल्य की दुकानें दलितों और जनजातियों को आवंटित करने के सरकारी आदेश की संवैधानिकता है व संविधान के अनुच्छेद 14 और 19(1)(जी) का उल्लंघन करता है, जिसमें कहा गया है कि अवसर की समानता केवल कानूनी समानता नहीं है, इसका अस्तित्व केवल संभावनाओं की अनुपस्थिति पर नहीं बल्कि

क्षमताओं की उपस्थिति पर निर्भर करता है। जो लोग मौजूदा सामाजिक परिस्थितियों से वंचित हैं, उन्हें वितरण के तरीकों में बदलाव करके अधिक लाभ दिया जाना चाहिए। वितरणात्मक न्याय आनुपातिक मानवता को पूरा करता है। लोगों के समूहों को आनुपातिक पुरस्कार लोगों के समूहों को देश की जनसंख्या में उनकी सदस्यता के अनुपात में उनकी आय और आर्थिक स्थिति को बढ़ाने में सक्षम बनाएगा। दलितों और जनजातियों का आर्थिक सशक्तिकरण संविधान के अनुच्छेद 46 के तहत परिकल्पित आर्थिक न्याय के सिद्धांतों में से एक है। जिले में उचित मूल्य की दुकानों के वितरण में दलितों और जनजातियों को 20 प्रतिशत आरक्षण प्रदान करके अवसर की समानता को वैध माना गया और यह संविधान के अनुच्छेद 14 और 19 का उल्लंघन नहीं करता है।

गरीबों, दलितों और जनजातियों का आर्थिक सशक्तिकरण, सामाजिक-आर्थिक लोकतंत्र की एक अभिन्न संवैधानिक योजना और राजनीतिक लोकतंत्र की जीवन शैली है। इसलिये, आर्थिक सशक्तिकरण एक बुनियादी मानव अधिकार और गरीबों, कमजोर वर्गों, दलितों और जनजातियों के लिये जीने, समानता और स्थिति और सम्मान के अधिकार के हिस्से के रूप में एक मौलिक अधिकार है। राज्य ने अपनी विधायी और कार्यकारी कार्यवाही द्वारा दलितों और जनजातियों और अन्य कमजोर वर्गों को उनके आर्थिक सशक्तिकरण के लिये भूमि आवंटित करने की नीति

विकसित की है। सरकार ने गरीबों को आर्थिक न्याय प्रदान करने के लिये दो आयामी आर्थिक नीतियां विकसित की। योजना आयोग ने समाज के कमजोर वर्गों के आर्थिक सशक्तिकरण के लिये डीआरडीएल जैसी नीतियां विकसित की। विशेषकर दलित और जनजातियों के लिये। तात्कालिक भरण-पोषण के लिये अल्पकालिक नीति और स्थिर एवं स्थायी आर्थिक सशक्तिकरण के लिये दीर्घकालिक नीति होनी चाहिये। सभी राज्य सरकारों ने अपनी भूमि या सीलिंग कानूनों के तहत अर्जित भूमि का आवंटन भी उन्हें सौंप दिया। नियोजित योजनाओं के तहत निर्दिष्ट भूमि या संपत्ति के हस्तान्तरण को रोकने के लिये उचित विधायी अधिनियमों को कानून की पुस्तकों में लाया जाता है, और हस्तान्तरण के तहत निषेध लगाया जाता है और इसके उल्लंघन में किसी भी हस्तान्तरण को शून्य या अवैध और निष्क्रिय घोषित करते हुये राज्य या समनुदेशिती को बाध्य नहीं करने के लिये अलगाव पर प्रतिबंध लगाया जाता है। यदि समनुदेशिती अयोग्य घोषित कर दिया गया था या उपलब्ध नहीं था, तो ऐसी भूमि को फिर से शुरू करने पर अधिकारियों को संपत्ति फिर से शुरू करने और नीति के संदर्भ में दलितों और जनजातियों या कमजोर वर्गों के बीच उत्तराधिकारी या अन्य पात्र को सौंपने का आदेश दिया जाता है। यह निषेध संविधान की प्रस्तावना के साथ पढ़े गये अनुच्छेद 14, 21, 38, 39 और 46 के तहत आर्थिक सशक्तिकरण की संवैधानिक नीति को प्रभावी बनाने के लिये है। यहाँ तक कि जनजातियों से संबंधित भूमि की निजी बिक्री के संबंध में

भी कानून सक्षम प्राधिकारी की पूर्व मंजूरी के बिना हस्तान्तरण पर रोक लगाता है।

यह देखा गया है कि भूमि के हस्तान्तरण के लिये पूर्व अनुमति एक शर्त थी। अनुमति देने से पहले, संविधान के अनुच्छेद 46 के तहत सक्षम प्राधिकारी को यह जांच करने का आदेश दिया गया है कि क्या ऐसा अलगाव कानून के तहत शून्य है या संविधान के प्रावधानों का उल्लंघन करता है और क्या अनुमति वैध रूप से दी जा सकती है। इस संबंध में, सक्षम प्राधिकारी को संपत्ति की प्रकृति, प्रस्तावित हस्तान्तरण की विषय-वस्तु और उसके तहत आने वाले पहले से मौजूद अधिकारों को देखने का आदेश दिया गया है और क्या इस तरह के अलगाव या बाधाएं संविधान या कानून के प्रावधानों का उल्लंघन करती हैं। यदि उत्तर सकारात्मक है, तो बिना किसी अतिरिक्त पूंछतांछ के अनुमति सीधे खारिज कर दी जाएगी। यदि अनुमति दी भी जाती है, तो इसका निर्णय संविधान और कानून के प्रासंगिक प्रावधानों के आधार पर किया जाएगा। इस मामले में, अधिकारियों ने, हालांकि मामले के पहलू पर ध्यान नहीं दिया था, लेकिन मोटे तौर पर इस आधार पर अनुमति देने से इन्कार कर दिया कि आवंटित भूमि को बेचने या गैर-कृषि उपयोग में परिवर्तित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इसलिये, अनुमति देने से इन्कार करने की कार्यवाही निदेशक सिद्धांतों के भाग 4 में संवैधानिक योजना के अनुरूप है।

इसलिये, अनुबंध अधिनियम की धारा 23 के तहत यह समझौता डीटीसी बनाम डीटीसी मजदूर कांग्रेस, 1990 (सप्ली.) 1 एससीआर, 192 में फैसले के अनुसार सार्वजनिक नीति के विपरीत, शून्य है, हममें से एक रामास्वामी, जे.जे साथ सांवत और रे, जे.जे. अलग-अलग लेकिन समवर्ती निर्णय से सहमत हुये और अलगाव के लिये अनुमति देने से इन्कार कर दिया गया। कब्जा गैर कानूनी है। संपत्ति हस्तान्तरण अधिनियम की धारा 53-ए लागू नहीं होती है। अपीलकर्ता का कब्जा गैरकानूनी बना हुआ है और वह भूमि पर किये गये किसी भी सुधार का मुआवजा पाने का हकदार नहीं है। कलेक्टर को निर्देश दिया जाता है कि वह जमीनों को तुरंत फिर से ग्रहण करें और इसे पहले प्रतिवादी के कानूनी प्रतिनिधियों, यदि पात्र पाया जाए, या किसी अन्य पात्र आदिवासी को सौंप दें। तद्रुसार, अपील बिना किसी हर्जे के खारिज की जाती है।

अपील खारिज।

नोट:- यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्रीमती मनदीप (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।

श्रीमती मनदीप